अनुवाद

बन्धु-बान्धवों के इन सब वर्गों को देखकर करुणा से अत्यन्त आक्रान्त हुआ अर्जुन इस प्रकार बोला।।२७।।

अर्जुन उवाच।
दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम्।
सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति।।२८।।

अर्जुनः उवाच=अर्जुन ने कहा; **दृष्ट्वा**=देखकर; **इमम्**=इस; **स्वजनम्**=कुल को; **कृष्ण**=हे कृष्ण; **युयुत्सुम्**=युद्ध की इच्छा से; **समुपस्थितम्**=खड़े हुए; **सीदन्ति**=शिथिल हो रहे हैं; **मम**=मेरे; **गात्राणि**=शरीर के अंग; **मुखम्**=मुख; **च**=भी; **परिशुष्यति**=सूखा जाता है।

अनुवाद

अर्जुन ने कहा, हे कृष्ण! युद्ध के लिए सम्मुख खड़े हुए इस स्वजन-समुदाय को देखकर मेरे शरीर के अंग शिथिल हो रहे हैं और मुख भी सूखा जाता है।।२८।।

तात्पर्य

यथार्थ भगवद्भक्त सम्पूर्ण दैवी गुणावली से नित्य युक्त रहता है। दूसरी ओर अभक्त चाहे विद्या एवं सभ्यता की प्राकृत योग्यताओं में कितनी भी प्रगति कर ले, पर उस में कोई दैवी गुण नहीं होता। इस कारण, युद्धभूमि में बन्धु-बांधवों को देखते ही अर्जुन उन परस्पर युद्ध की इच्छा वालों पर दयार्द्र हो उठा। अपने सैनिकों के प्रति तो उसकी सहानुभूति पूर्व से थी ही, अब शत्रुपक्ष के सैनिकों की आसन्न मृत्यु को देखते हुए वह उन पर भी द्रवित हो गया। निकटवर्ती महाविनाश की कल्पना से उसके अंगों में कम्प होने लगा और मुख सूख सा गया। वहाँ पर समवेत योद्धाओं की युद्ध-भावना को देखकर उसे महान् विस्मय हुआ। प्रायः सम्पूर्ण कुल, सभी कुटुम्बी उससे युद्ध करने आए थे। इससे दयामय भक्त अर्जुन करुणा से द्रवित हो उठा। यद्यपि यहाँ उल्लेख नहीं है, परन्तु यह सहज अनुमान का विषय है कि अर्जुन के मुख का सूखना और अंगों में कम्पन ही नहीं हो रहा था, वह दयाजन्य अश्रुविमोचन भी कर रहा था। उसमें इन लक्षणों के प्रादुर्भाव का कारण दौर्बल्य न होकर हृदय की कोमलता है, जो शुद्ध भगवद्भक्त का एक प्रधान लक्षण है। इसी हेतु श्रीमद्भागवत में उल्लेख है:—

यस्यास्ति भक्तिर्भगवत्यकिंचना सर्वैर्गुणैस्तत्र समासते सुराः।
हरावभक्तस्य कुतो महद्गुणा मनोरथेनासति धावतो बहिः।।

भगवान् श्रीकृष्ण के निष्किंचन भक्त में सभी दैवी गुणों का नित्य निवास रहता है। अभक्त में तो केवल तुच्छ प्राकृत गुण ही रहते हैं, क्योंकि मनोरथों के पीछे धावन करते रहने से वह अवश्य माया के प्रति आकृष्ट हो जाता है। (श्रीमद्भागवत ५.१८.१२)